International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493; Impact Factor: RJIF 5.46
Received: 06-06-2020; Accepted: 21-06-2020; Published: 07-07-2020
Volume 2; Issue 3; 2020; Page No. 10-11

हिन्दी उपन्यास पर पश्चिम का प्रभाव

अनीता
एम.फिल. हिन्दी, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत

प्रस्तावना

हिन्दी उपन्यास के संदर्भ में उसके उद्भव की दृष्टि से यह सवाल उठाया जाता रहा है कि भारतीय नवजागरण के दौर में विकसित अनेक दूसरी विद्याओं की तरह उपन्यास सीधे–सीधे पश्चिम से आया या उसके उद्भव में भारतीय आख्यान की परंपरा की कोई भूमिका रही है? विश्व साहित्य में उपन्यास विद्या का प्रारंभ वैसे यूरोप के पुनर्जागरण काल के बाद से माना जाता है। जागृति की यह लहर सबसे पहले इटली से आरंभ होकर एक के बाद एक देश में फैलती गई। औद्योगिक क्रांति ने इसमें महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। भारत में औद्योगिक युग एवं नई सभ्यता का आगमन अंग्रेजी साहित्य के संपर्क से हुआ। अंग्रेजी शिक्षा–दीक्षा ने हमें नई सभ्यता से परिचित कराया। भारत में अंग्रेजी शासन और उसी के परिणामस्वरूप अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव के कारण भारतीय साहित्यकारों का यूरोपीय साहित्य से परिचय हुआ।

त्रहिन्दी साहित्य में जिस उपन्यास शब्द का प्रचलन हुआ, वास्तव में वह अंग्रजी शब्द Novel का ही पर्यायी है। इस विषय में डॉ० त्रिभुवनसिंह ने कहा है कि– 'हिन्दी का उपन्यास शब्द अंग्रेजी के –नॉवेल' शब्द के तौर पर ही गढ़ा गया है, जिसके द्वारा एक ऐसे अपूर्व साहित्य से विलक्षण, अनोखा और अनूठा है, जिसकी सृष्टि साहित्यकार अपनी कल्पना शक्ति से करता है'।

सन् 1882 से लेकर 1916 तक के समय को प्रेमचंद–पूर्व हिन्दी उपन्यास या आरम्भिक काल माना जा सकता है। इस काल के प्रतिनिधि उपन्यास लेखकों में देवकीनंदन खत्री उल्लेखनीय है। इसी काल में एक और नाम उल्लेखनीय है वह है बाबू गोपालराम गहमरी जिन्होंने जासूसी उपन्यासों की परंपरा में अनेक रचनाएँ लिखी। देवकीनंदन खत्री ने 'चंद्रकांता' और 'चंद्रकांता संतति' जैसे उपन्यास लिखे। उन्नीसवी शताब्दी के उत्तरार्थ के उपन्यासों पर अंग्रेजी का प्रभाव चार रूपों में दिखाई देता है। प्रथम ऐसे उपन्यास है, जिनमें जादू टोना, ऐय्यारी, चमत्कार का ही महत्त्व होता था। मात्र मनोरंजन इनका उद्देश्य था। दूसरे ऐसे उपन्यास है जिनमें मात्र रहस्य, अद्भुद घटनाओं को महत्त्व दिया जाता था। इस धारा के प्रमुख प्रवर्तक बाबू गोपालराम गहमरी है। इन्होंने 'जासूस की भूल', 'बेगुनाह का खून', 'अद्भुद लाश', जैसी लगभग 150 पुस्तकें लिखी जिन पर अंग्रेजी के जासूस उपन्यासों का गहरा प्रभाव है। यह सत्य है कि 'लंदन रहस्य' जैसी रचनाओं में उत्कंठता और बहाव नहीं है फिर भी पाठकों को घटना के साथ बहाकर ले जाने का सामर्थ्य उनकी रचनाओं में अवश्य है। तृतीय प्रकार के उपन्यासों में ऐसी रचनाएँ आती है जिनमें प्रेमप्रधान और काल्पनिक कथानक जैसी रचनाएँ है। इस धारा के प्रमुख प्रवर्तक किशोरीलाल गोस्वामी है। किशोरीलाल गोस्वामी के प्रेमप्रधान उपन्यासों में 'अंगूठी का नगीना', 'स्वर्गीय कुसुम वा कुसुम कुमारी' आदि है। जहाँ नायक और नायिका कभी नांव में, कभी गांव में और कभी ट्रेन में मिलते है। ये सभी प्रेम कथाएँ यथार्थ से दूर कल्पना लोक की है जिन पर अंग्रेजी के 'लैला' आदि प्रेमप्रधान उपन्यासों का गहरा प्रभाव है।

चतुर्थ प्रकार के उपन्यासों में ऐसी रचनाएँ आती है जो या तो अनुदित की गई थी या जिनमें समाज–सुधार और आदर्शवादिता का उपदेश था। इस प्रकार के उपन्यासों पर अंग्रेजी में 'राम काका की कुटिया' का प्रभाव कई स्थानों पर दिखाई देता है। जो रचनाएँ बंगला से अनुदित थी उन में देश भक्ति, समाज–सुधार और नीति के गीत गाए गए। इस समय की रचनाओं में लाला श्रीनिवास दास का 'परीक्षा गुरू', बालकृष्ण भट्ट का 'नूतन ब्रह्मचारी', अयोध्यासिंह उपाध्याय का 'ठेठ हिन्दी का ठेठ', लज्जा राम शर्मा का 'आदर्श दंपति' आदि उल्लेखनीय हैं। इन उपन्यासों में उपदेशात्मकता, आदर्शवादिता तथा नैतिकता के आधार पर समाज को नया स्वरूप देने पर जोर दिया गया है।

इसी समय अंग्रेजी साहित्य में एक नया मोड़ आया जिसने उपन्यास के क्षेत्र में क्रांति ला दी। अंग्रेजी साहित्य में यर्थाथवाद का आगमन हुआ। एमिलजोला और गाय दी मोपांसा ने अपनी रचनाओं के द्वारा इस आंदोलन को आगे बढ़ाया। फ्रांस का यह आंदोलन अंग्रेजी में आया और अंग्रेजी माध्यम के द्वारा हिन्दी में अवतरित हुआ। हिन्दी उपन्यास में इस समय तक प्रेमचंद का आगमन हो चुका था। प्रेमचंद ने अनातोले फ्रांस की प्रसिद्ध कृति 'थायस' का 'अहंकार' के नाम से हिन्दी में अनुवाद किया। धीरे–धीरे यथार्थवाद का यह आंदोलन हिन्दी साहित्य में भी जड़ पकड़ता गया। स्वयं प्रेमचंद ने हिन्दी उपन्यास को चमत्कारिक और काल्पनिक लोक से निकालकर यथार्थ की भूमि पर खड़ा कर दिया। अब मानव समाज उसके सुख–दुख उपन्यास के विषय बनें जो क्रांति फ्रेंच और रशियन उपन्यासों में आई थी, प्रेमचंद युग से उसी का आगमन हिन्दी उपन्यासों में हुआ। सामाजिक विषमता और अत्याचार का चित्रण उपन्यासों में होने लगा। सामाजिक अत्याचार के कुछ रूप हमें 'गंगाजमुनी', 'हृदय की परख', 'व्यभिचार', 'दिल्ली का दलाल' आदि उपन्यासों में देखने को मिलते हैं। इन उपन्यासों में नगर के वेश्यालयों, अनाथालयों, विधवा आश्रमों और सेवा सदनों की पोल खोली गई और समाज की कुरीतियों को उजागर किया गया। इन सभी रचनाओं में यथार्थवाद का वह रूप मिलता है जिसे हम प्रकृतिवाद, रियलिज्म कहते है और जिस पर जोला, गाय दी मोपांसा की छाप है। प्रेमचंद युग के समाप्त होने तक लघु उपन्यास की विधा भी उपन्यास विधा के अन्तर्गत ही प्रवाहित हो रही थी। इस विधा में जैनेन्द्र के 'परख' और 'त्यागपत्र' जैसे उपन्यास आते हैं। जैनेन्द्र के उपन्यासों ने अपने जन्म के साथ ही उपन्यास नाम के साथ विद्रोह किया है इनके उपन्यासों का आकार, कथ्य अन्य उपन्यासों से पूरी तरह भिन्न है। प्रेमचंद के लघु उपन्यास 'निर्मला', 'प्रतीज्ञा', 'वरदान' जो लगभग 1929/30 में किए गए। प्रेमचंद के ये लघु उपन्यास बताते है कि प्रेमचंद युग के अंतिम दौर में ही लघु उपन्यास लिखने आंरभ हो चुके थे।

प्रेमचंद और जैनेन्द्र की कृत्तियों पर मनोविज्ञान का प्रभाव दिखाई देता है। विशेष रूप से जैनेन्द्र की रचनाओं में मनोविज्ञान के सामाजिक

चित्रण का स्वरूप देखने को मिलता है। जैनेन्द्र की रचनाओं को पढ़ते समय लगता है कि वैचारिक दृष्टि से उन पर पाश्चात्य दर्शन का प्रभाव है। पाश्चात्य विचारों को लेकर चलने वाले जैनेन्द्र अकेले नहीं है अपितु कई ऐसे उपन्यासकार हैं जिन पर पाश्चात्य विचारकों का प्रभाव है। भगवती चरण वर्मा, यशपाल, उपेन्द्रनाथ अश्क आदि की रचनाओं पर मोपांसा या लारेन्स का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है।

अस्तित्ववाद के प्रेरक ज्यां–पाल सार्त्र, अल्बर्ट कामू आदि ने अनेक उपन्यास लिखे जिन पर अस्तित्ववादी विचारधारा का प्रभाव है। अज्ञेय के उपन्यास 'अपने–अपने अजनबी' इसी प्रकार का एक उपन्यास है। इस उपन्यास का मूल स्वर ज्यां–पाल सार्त्र के स्वर से मेल खाता है। अज्ञेय ने मृत्यु और जीवन के जिस संत्रास का चित्रण किया है, वह भिन्न संदर्भ में पाश्चात्य साहित्य में पहले ही आ चुका था। इसी प्रकार प्रभाकर माचवे के 'परन्तु' उपन्यास में शैली की दृष्टि से नए प्रयोग किए गए। पाश्चात्य साहित्यकारों ने इस शैली का प्रयोग बहुत पहले ही अपनी रचनाओं में किया है। समलैंगिक समस्या का चित्रण सबसे पहले हिन्दी में राजकमल चौधरी ने 'मछली मरी हुई' में किया। इसी प्रकार नागार्जुन और कमलेश्वर ने भी इस विषय को लेकर अत्यंत मार्मिक रचनाएँ लिखी। यह सारे प्रयोग इस बात को स्पष्ट कर देते है, कि हिन्दी उपन्यासों पर पश्चात्य का प्रभाव है।

हिन्दी का प्रथम मौलिक उपन्यास लाला श्रीनिवासदास–कृत 'परीक्षा गुरू' उपन्यास के रूप–गठन में दो बातें अत्यंत रोचक तथा उपन्यासकार की मनः प्रवृति की परिचारक है। एक तो यह कि इस उपन्यास के अध्यायों के प्रारंभ में देशी तथा विदेशी नीति वचन दिखाए गए है। कहीं कहीं तो नीति–वचन का संबंध कथा वस्तु से मेल खाते हैं, और कहीं कहीं इनका अस्तित्व एकदम स्वतंत्र दिखाई देता है। दूसरी जो रोचक तथा महत्त्वपूर्ण बात है, वह यह कि कथावस्तु दो भागों में विभक्त है। उपन्यास के कुछ अंश रेखांकित है, तथा अधिकांश साधारण मुद्रित हैं। उपन्यासकार ने अपनी भूमिका में यह स्पष्ट कर दिया है कि जो पाठक इस उपन्यास का अध्ययन कथा द्वारा अपना मनोरंजन करने के लिए करना चाहते है, वे कृप्या रेखांकित अंशों को छोड़कर पढ़ें।

बालकृष्ण भट्ट के 'सौ सुजान एक सुजान' में नीति संबंधी उदाहरण देने की प्रकृति बहुत बढ़ी चढ़ी दिखाई देती है। खत्री जी के तिलिस्मी उपन्यासों तथा गहमरी के जासूसी उपन्यासों के पश्चात् हिन्दी उपन्यास के विकास में दूसरी श्रेणी पं० किशोरीलाल गोस्वामी से प्रारम्भ होती है। गोस्वामी जी की कला मुख्यतः यथार्थवादी थी। परंतु उनकी यथार्थ भावना बहुत स्वस्थ नहीं थी। गोस्वामी जी के संबंध में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' में स्पष्ट लिखा है कि 'यह दूसरी बात है कि उनके बहुत से उपन्यासों का प्रभाव नवयुवकों पर बुरा पड़ सकता है।' गोस्वामी युग के दूसरे उपन्यासकारों में दायित्व की भावना बहुत प्रधान नहीं रही। अंग्रेजों के आगमन के साथ–साथ साहित्यिक विद्या नोवेल से भारतीय साहित्यकारों का परिचय हुआ। अंग्रेजी नोवेल के पीछे भारतीय साहित्यकार जितना भागे उतनी पछाड़ खाई। सब से बड़ी दुखद बात यह थी कि उन्नीसवीं शताब्दी में विदेशी लोग भारतीय कथाओं के पीछे भाग रहे थे और हमारे भारतीय साहित्यकार अंग्रेजी ढंग का नोवेल लिखने की होड़ में थे।

जैनेन्द्र अपने उपन्यास 'त्याग–पत्र' के द्वारा जिन नैतिक मूल्यों की स्थापना करना चाहते है, यद्यपि उसमें उन्हें पूर्ण सफलता नहीं मिल सकी है, फिर भी एक नया दृष्टिकोण हमें देखने को मिलता है, आरम्भ में जिज्ञासा और कुतूहल के लिए लिखे गए दो–चार शब्द इसके प्रमाण है कि जैनेन्द्र कथा कहने में कितने कुशल है। इसी प्रकार यशपाल पर मार्क्सवास का गहरा प्रभाव देखने को मिलता है, किन्तु उनकी रचनाओं में किसान मजदूरों की समस्या का चित्रण नही के जैसा हुआ है। प्रेमचंद का उपन्यास 'गोदान' हमारा प्रतिनिधि उपन्यास है, किन्तु उपन्यास में विस्तार के कारण उसमें अनेक पात्र और घटनाएँ निरर्थक प्रतीत होती है।

सामान्यतः हिन्दी के उपन्यासकार वर्णन के आरंभिक स्तर से ऊपर उठने का उपक्रम ही करते हैं। इसके लिए एक सीमा तक जिम्मेदार व्यावसायिक लेखन है, पर मूल कठिनाई रचना के स्तर पर है। हिन्दी उपन्यास में वर्णन और कहानी का अब तक का महत्त्व एक सीमा तक इसी असाहित्यिक स्पर्धा के कारण है और इससे उपन्यास की वास्तविक रचना शीलता में बाधा ही उत्पन्न होती है। पर मूल कठिनाई फिर भी उपन्यास में भाषिक संघटन की दुहरी प्रक्रिया को न संभाल पाने के कारण है। वर्णन और कहानी पर पूरी तरह निर्भर रहने वाले उपन्यासों में से एक यशपाल का 'झूठा सच' है। इस उपन्यास को पढ़ते समय यह महसूस नहीं होता कि उपन्यास पढ़ रहें हैं, बल्कि लगता है कि विभाजन के दिनों के पुराने समाचारपत्रों की फाइल पढ़ रहें है।

अंततः हम देखते है कि हिन्दी साहित्य पर पाश्चात्य साहित्य का गहरा प्रभाव है। आधुनिक हिन्दी साहित्य की विविध विधाएँ जैसे कहानी, नाटक, उपन्यास, समीक्षा आदि पाश्चात्य साहित्य विधाओं से प्रभावित है। यह प्रभाव सामाजिक यथार्थबोध, के कारण या परिस्थितियों के कारण हो सकता है। हिन्दी साहित्य में प्रारम्भिक उपन्यासों का उद्देश्य मनोरंजन अधिक था, परन्तु प्रेमचंद का आगमन हिन्दी साहित्य में वरदान साबित हुआ। इस काल के हिन्दी उपन्यासों पर पाश्चात्य लेखक और उनकी यथार्थवादी दृष्टि का प्रभाव दिखाई देता है, जिस कारण उस समय के उपन्यासों का अनुवाद भी हुआ। यथार्थवाद के कारण वास्तव में मनुष्य जीवन की त्रासदी, सुख–दुख, अनाचारों का चित्रण उपन्यासों में आरंभ हुआ। इसी प्रकार से अज्ञेय, इलाचंद्र जोशी आदि फ्रायड के मनोविश्लेषणवाद से प्रभावित हुए, तो वहीं यशपाल, नागार्जुन जैसे साहित्यकार मार्क्सवाद से प्रभावित हुए। अब उपन्यासों का विषय स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, किन्नर विमर्श जैसे हाशिए के समाज भी होने लगे है। इसके कारण आने वाली पीढ़ी के लिए शोध के रास्ते खुल गए है।

संदर्भ सूची

1. डॉ० त्रिभुवन सिंह, हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, 1965
2. आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद आठवां संस्करण, 2012
3. राजेन्द्र यादव, उपन्यास स्वरूप और संवेदना, वाणी प्रकाशन, संस्करण 1997
4. रामस्वरूप चतुर्वेदी, गद्य की सत्ता, मैकमिलन कंपनी ऑफ इंडिया, नई दिल्ली, 1977